साप्ताहिक
Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

Global
School Of
Excellence,
Obedullaganj

वर्ष : 7, अंक : 4 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 15 सितंबर से 21 सितंबर 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

जलवायु संकट–2 : भारत सहित सभी एशियाई देशों में 2021 में दिखा सबसे अधिक असर

नई दिल्ली। एशिया साल 2021 में चरम मौसमी घटनाओं से सबसे अधिक प्रभावित महाद्वीप रहा। जून से यहां भीषण बाढ़ का सिलसिला जारी है जो अप्रत्याशित बारिश का नतीजा है। चीन के हेनान प्रांत में 17 जुलाई से शुरू हुई बारिश महज पांच दिनों में पूरे साल जितनी बरस गई। प्रांत की राजधानी जेंगझू 20 जुलाई को छह घंटे हुई बारिश से जलमग्न हो गया। इन छह घंटों में आधे साल जितनी बारिश हो गई। चीनी मीडिया ने मौसम विभाग के अधिकारियों के हवाले से बताया कि एक हजार साल में एक बार इतनी बारिश होती है। कुछ मीडिया रिपोर्ट में इसे 5,000 साल में एक बार होने वाली बारिश बताया गया। भारत में मॉनसून जून में आ जाता है लेकिन इस साल 13 जुलाई तक बारिश नहीं हुई। लेकिन जब हुई तब असामान्य रूप से अत्यधिक पानी बरस गया। मध्य प्रदेश का शिवपुरी जिला आमतौर पर गर्मियों में पानी की कमी के लिए जाना जाता है। मौसम विभाग के अनुसार, 2-3 अगस्त को केवल 38 घंटों के भीतर जिले में 454.57 एमएम बारिश हो गई। यह एक साल में पूरे जिले में होने वाली बारिश का करीब 55 प्रतिशत है। जिले ने इस मॉनसून में 896.3 प्रतिशत दर्ज की है। इस क्षेत्र में औसत बारिश 816 एमएम होती है।

शिवपुरी के पोहरी ब्लॉक के सामाजिक कार्यकर्ता अजय यादव कहते हैं, “मैं 42 साल का हूं। मैंने अपनी जिंदगी में पहली बार इतनी भारी बारिश देखी है। बड़े बुजुर्गों को भी वह दिन याद नहीं जब इससे अधिक बारिश देखी गई थी।” शिवपुरी के जलमग्न होने के वक्त यादव एक स्थानीय तालाब के गहरीकरण का काम कर रहे थे। इसी तरह गोवा ने 10-23 जुलाई के बीच औसत से 122 प्रतिशत अधिक बारिश दर्ज की। गोवा में मौसम विभाग के वैज्ञानिक राहुल एम ने डाउन टू अर्थ को बताया कि इस अवधि में राज्य में 471 एमएम सामान्य बारिश की तुलना में 1,047.3 एमएम बारिश दर्ज की गई। 23-24 जुलाई को उत्तरी और दक्षिणी गोवा के जिलों में 24 घंटों के भीतर 585 एमएम बारिश दर्ज की गई। यह बारिश भूस्खलन और राज्य के निचले क्षेत्रों में बाढ़ का कारण बनी। राज्य का रत्नागिरी जिला भी इस साल भीषण बाढ़ का गवाह बना जिसमें 200 से अधिक लोग मारे गए। यहां हुई बारिश ने जुलाई में हुई बारिश का 40 साल पुराना रिकॉर्ड तोड़ दिया। मौसम विभाग के आंकड़ों और फ्लडलिस्ट वेबसाइट के अनुसार, जिले में 1-22 जुलाई के मध्य 1,781 एमएम बारिश दर्ज की गई। यहां जुलाई की बारिश का औसत 972.5 एमएम है। राज्य के कोल्हापुर जिले में 23 जुलाई को 232.8 एमएम बारिश दर्ज की गई जो एक दिन में होने वाली सामान्य बारिश से 10 गुणा अधिक है। इसी दिन सतारा जिले में भी सामान्य से 7 गुणा अधिक बारिश दर्ज की गई। राज्य में बाढ़ की सबसे भयंकर स्थिति मुंबई की हुई। 18 जुलाई को मुंबई में 180.4 एमएम और इसके उप शहरी क्षेत्रों में 234.9 एमएम बारिश हुई। इस एक दिन में होने वाली सामान्य बारिश का यह छह से सात गुणा है (देखें, वैश्विक तापमान,क्षेत्रीय आफत,)।

अफ्रीका की मुश्किल- कोविड-19 महामारी के उभार से जूझ रहे अफ्रीका के कई देशों पर खाद्य असुरक्षा का खतरा मंडरा रहा है। यह खतरा बाढ़ और सूखे की देन है। उत्तरी अफ्रीका में इस साल जून सबसे गर्म रहा है। दक्षिणी मेडागास्कर चार दशकों के सबसे भीषण सूखे की गिरफ्त में है। 23 जून को संयुक्त राष्ट्र के वर्ल्ड फूड प्रोग्राम (डब्ल्यूएफपी) ने चेतावनी दी कि दक्षिणी मेडागास्कर में 1.14 मिलियन लोग खाद्य असुरक्षा के शिकार हैं और 4 लाख लोग भुखमरी की ओर अग्रसर हैं। दक्षिण में स्थित अफ्रीकी देशों के अधिकांश जिले कुपोषण के आपातकाल के दुष्चक्र में हैं। डब्ल्यूएफपी ने इन हालातों को विनाशकारी बताया है और इसके लिए युद्ध या संघर्ष के बजाय जलवायु परिवर्तन को जिम्मेदार माना है। इसने हाल में कहा कि महिलाओं और बच्चों को खाद्य वितरण स्थल तक पहुंचने के लिए घंटों पैदल चलना पड़ता है। यूएन न्यूज ने अधिकारियों के हवाले से बताया कि परिवारों को भोजन के लिए कच्चे लाल कैक्टस फलों, जंगली पत्तों और टिड्डों पर कई महीने आश्रित रहना पड़ा। इस त्रासदी को रोकने के लिए डब्ल्यूएफपी को 78.6 मिलियन डॉलर की आवश्यकता है ताकि अगले मौसम में जीवन रक्षक भोजन उपलब्ध कराया जा सके। दक्षिणी अफ्रीका में डब्ल्यूएफपी की क्षेत्रीय निदेशक लोला केस्ट्रो ने जून में कहा कि हालात बेहद दयनीय और निराशाजनक हैं। बच्चे और वयस्क दोनों कुपोषण के शिकार हैं। डब्ल्यूएफपी के कार्यकारी निदेशक डेविड बीसले ने कहा, “इस क्षेत्र ने जलवायु परिवर्तन में योगदान नहीं दिया है फिर भी यह सबसे बड़ी कीमत चुका रहा है।” डब्ल्यूएफपी के अनुसार, 2015 से मेडागास्कर के दक्षिणी हिस्से में पिछले पांच वर्षों के दौरान औसत से कम बारिश हुई है। वर्तमान सूखा 1981 के बाद का सबसे भीषण सूखा है। ब्रिटेन स्थित मानवतावादी संगठन वर्ल्ड विजन के अनुसार, पूर्वी अफ्रीका के छह देश- इथियोपिया, केन्या, सोमालिया, दक्षिणी सूडान, सूडान और युगांडा के 7.8 मिलियन लोगों को लंबे संघर्ष, कोविड-19 महामारी और जलवायु आपदा ने भुखमरी के रास्ते पर धकेल दिया है। कम से कम 2.6 करोड़ लोग पहले से संकटग्रस्त हैं। वर्ल्ड विजन द्वारा 28 जून को प्रकाशित सिचुएशन रिपोर्ट में चेताया गया है कि अन्य लोगों को इस स्थिति में पहुंचने से रोकने के लिए तत्काल कदम उठाने की आवश्यकता है। तालाश ने 24 जुलाई को कहा कि जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम, जलवायु और जल संबंधी आपदाओं की भीषणता बढ़ रही है। मानवीय और आर्थिक क्षति के रूप में इसकी दयनीय तस्वीर उभरती है। मूसलाधार बारिश और विनाशकारी बाढ़ ने मध्य यूरोप और चीन में पिछले कुछ हफ्तों में जानमाल को काफी नुकसान पहुंचाया है।इस साल जून-जुलाई की घटनाएं केवल नींद से जगाने का काम ही नहीं कर रहीं बल्कि नई वास्तविकता को स्वीकरने के लिए भी झकझोर रही हैं। अब जलवायु की चरम घटनाएं, युद्ध और जैविक घटनाओं से अधिक आर्थिक क्षति पहुंचा रही हैं। विश्व बैंक के अध्ययन “ग्लोबल प्रोडक्टिविटी ट्रेंड्स, ड्राइवर्स एंड पॉलिसीज” के अनुसार, 1960 से 2018 के बीच युद्ध की अपेक्षा प्राकृतिक आपदाएं 25 गुणा और 2008 जैसे आर्थिक संकट के मुकाबले 12 गुणा बढ़ी हैं। प्राकृतिक आपदाओं की श्रेणी में जलवायु संबंधी आपदाएं जैसे चक्रवात और चरम मौसम की घटनाएं तेजी से बढ़ी हैं। ये घटनाएं अर्थव्यवस्थाओं और श्रमबल की उत्पादकता को चोट पहुंचा रही हैं। इस अवधि में जलवायु संबंधी आपदाएं कोविड-19 जैसी जैविक आपदाओं की तुलना में दोगुनी हुई हैं। सभी प्राकृतिक आपदाओं में जलवायु संबंधी आपदाओं की हिस्सेदारी 70 प्रतिशत है। प्राकृतिक आपदाओं ने श्रम की उत्पादकता में सालाना 0.5 प्रतिशत की कमी ला दी है जो श्रम उत्पादकता पर पड़े युद्ध के प्रभाव का करीब 1/5 हिस्सा है। लेकिन जलवायु संबंधी आपदाएं समग्र रूप से इतनी बढ़ जाती हैं कि श्रम उत्पादकता को ज्यादा नुकसान पहुंचाती हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा शीघ्र प्रकाशित होने वाली रिपोर्ट “एटलस ऑफ मोर्टेलिटी एंड इकॉनोमिक लॉसेस फ्रॉम वेदर, क्लाइमेट एंड वाटर एक्स्ट्रीम्स (1970-2019) बताती है कि पिछले 50 वर्षों में मौसम, जलवायु और जल संबंधी जोखिम की सभी आपदाओं (तकनीकी जोखिम सहित) में हिस्सेदारी 50 प्रतिशत रही है। वैश्विक स्तर पर 45 प्रतिशत मृत्यु और 74 प्रतिशत आर्थिक नुकसान इनसे हुआ है।

गर्म होते मौसम में बढ़ेंगे फसल चट करने वाले कीट–पतंगे, कीटनाशक भी होंगे बेअसर...

मुंबई। इस सदी की बदलती जलवायु के चलते दुनिया भर में कीटों के फैलने और उन पर कीटनाशकों के बेअसर होने की आशंका बढ़ गई है। फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले इन कीट-पतंगों की वजह से वैश्विक खाद्य सुरक्षा का संकट गहरा रहा है। एक नए अध्ययन में कहा गया है कि फसलों को सबसे अधिक हानि पहुंचाने वाले कीटों में से एक डायमंडबैक मौथ के अब साल भर जीवित रहने के आसार हैं। यह अमेरिका, यूरोप और दक्षिण एशिया के बड़े हिस्सों में कीटनाशकों के प्रतिरोध को तेजी से विकसित करेगा। जबकि इससे पहले यह कीट सर्दियों में मर जाता था।

मोथ, प्लूटेला जाइलोस्टेला, जिसे गोभी के कीट के रूप में भी जाना जाता है, पहले से ही ब्रोकोली, फूलगोभी, पत्ता गोभी, सरसों, मूली, शलजम, जलकुंभी, ब्रसेल्स स्प्राउट्स और अन्य फसलों को हर साल दुनिया भर में 4 बिलियन डॉलर से अधिक का नुकसान पहुंचाता है। इस पर कम से कम 97 कीटनाशकों का असर नहीं होता है। साथ यह दुनिया की सबसे अधिक कीटनाशक प्रतिरोधी प्रजातियों में से एक है। यह अपनी तरह का पहला अध्ययन है जिसमें राइस यूनिवर्सिटी और चाइनीज एकेडमी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज के शोधकर्ताओं ने प्रयोगशाला और क्षेत्र के प्रयोगों में वर्षों लगाए हैं। भविष्य में जलवायु के गर्म होते परिदृश्यों को कंप्यूटर सिमुलेशन और मौथ या कीट पर दशकों तक शोध कर उसका मेटा-विश्लेषण किया। राइस विश्वविद्यालय में जीव विज्ञान के प्रोफेसर और सह अध्ययनकर्ता वोल्कर रुडोल्फ ने कहा कि इस बारे में पूरी जानकारी है कि जलवायु परिवर्तन प्रजातियों के वितरण और श्रेणियों में बदलाव कर रहा है, लेकिन चुनौती यह अनुमान लगाने की है कि प्रजातियां दुनिया के किस हिस्से में जाएंगी। प्रमुख अध्ययनकर्ता रुडोल्फ जिन्होंने एक विशिष्ट तंत्र को अलग करने के उद्देश्य से प्रयोगशाला प्रयोगों के साथ शुरुआत की, जिसका उपयोग सटीक रूप से पूर्वानुमान लगाने के लिए किया जा सकता है कि बदलती जलवायु के जवाब में डायमंडबैक कीट-पतंगें कैसे विकसित होंगें तथा ये किस तरह प्रतिक्रिया देगें। पिछले प्रयोगों में पाया गया था कि सबसे ठंडे तापमान पर कुछ ही पतंगे जीवित रह सकते हैं, लेकिन यह भी अच्छी तरह से पता था कि पतंगे हर सर्दियों में उन जगहों पर मर जाते हैं जहां तापमान काफी अधिक होता है। रुडोल्फ ने कहा कि प्रयोगशाला अध्ययनों ने टीम को यह अनुमान लगाने की मदद मिली है कि सर्दियों में एक महत्वपूर्ण सीमा से नीचे हर रोज का कम तापमान के आधार पर पतंगे सर्दियों में या साल भर जीवित रह सकते हैं, एक मीट्रिक जिसे उन्होंने कम तापमान के दिन करार दिया। रुडोल्फ ने कहा कि यह 90 फीसदी से अधिक मृत्यु दर का पूर्वानुमान लगाता है। आमतौर पर इनके बीच इतने मजबूत संबंध नहीं पाए जाते हैं। उन्होंने कहा कि इसने शोधकर्ताओं को एक साधारण बदलाव के बारे का इशारा दिया जो कि यांत्रिक रूप से प्रजातियों के अस्तित्व से जुड़ा हुआ था और पिछले जलवायु आंकड़ों या जलवायु के भविष्य मॉडल से गणना करना वास्तव में आसान था। शोधकर्ताओं ने पाया कि पिछले 50 वर्षों में जलवायु परिवर्तन ने डायमंडबैक कीट (मौथ) की सर्दी की अधिक सीमा या ओवरविन्टरिंग रेंज को 925,000 वर्ग मील से अधिक बढ़ा दिया है। उन्होंने यह भी दिखाया कि 1 डिग्री सेल्सियस के औसत वैश्विक तापमान में प्रत्येक वृद्धि से मोथ की ओवरविन्टरिंग रेंज लगभग 850, 000 वर्ग मील तक फैल जाएगी। अध्ययन में कहा गया है कि वर्तमान जलवायु मॉडल का अनुमान है कि आने वाले 100 से 150 वर्षों के दौरान वैश्विक तापमान में 2 से 6 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होगी। रुडोल्फ ने कहा कि डायमंडबैक मौथ कीटनाशक प्रतिरोध के दशकों के पिछले अध्ययनों के मेटा-विश्लेषण के साथ संयुक्त अधिक सर्दी के आंकड़ों ने टीम को यह दिखाने की अनुमति दी कि जलवायु परिवर्तन अमेरिका, चीन, जापान और भूमध्यसागरीय हिस्सों में विकसित कीटनाशक प्रतिरोध की समस्या को नाटकीय रूप से कैसे बदल सकता है जो वर्तमान में मौथ या पतंगे के लिए अधिक सर्दी की सीमा तक बढ़ रहा है। रुडोल्फ ने कहा कि हम ओवरविन्टरिंग की परवाह करते हैं क्योंकि अगर वे सर्दियों में जीवित रहते हैं और साल भर रहते हैं तो कीटनाशक प्रतिरोध के तेजी से विकास होगा। यह अध्ययन जर्नल नेचर कम्युनिकेशंस में प्रकाशित हुआ है। डायमंडबैक मौथ और कई अन्य फसल कीट जैसे आर्मीवर्म, प्लांट हॉपर, लीफरोलर और एफिड्स की कुछ प्रजातियां गर्म क्षेत्रों में सर्दियों के मौसम में रहती हैं और सालाना पलायन करती हैं। जिससे उन क्षेत्रों में फसलों को काफी नुकसान होता है जहां वे ओवरविन्टर नहीं कर सकते। रुडोल्फ ने कहा कि जहां ये प्रजातियां ओवरविन्टर नहीं कर सकती हैं, वे कीटनाशक प्रतिरोध विकसित करने के लिए धीमे पाए गए हैं। क्योंकि वे हमेशा किसी विशेष इलाके को फिर से बसाने के लिए कहीं और से आते हैं, इसलिए हर साल इनके अलग-अलग पूर्वजों के आने की आशंका सबसे अधिक होती है। तो आप कीटनाशक प्रतिरोध के लिए मौसम के भीतर चयन कर सकते हैं, लेकिन पूरे मौसम में चयन रुक जाता है। शोधकर्ताओं के डायमंडबैक पतंगों में कीटनाशक प्रतिरोध के वैश्विक मेटा-विश्लेषण ने इन दो प्रकार की विकासवादी प्रक्रियाओं के बीच महत्वपूर्ण अंतर का पता लगाया कि ठंडे या ओवरविन्टरिंग साइटों पर औसत कीटनाशक प्रतिरोध 158 गुना अधिक था।

अध्ययन में पाया गया कि साल भर की सीमा की दोहरी मार और कीटनाशक प्रतिरोध के अधिक तेजी से विकास नियंत्रण के प्रयासों को गंभीर रूप से बाधित कर सकते हैं और डायमंडबैक पतंगों से किसानों को अधिक आर्थिक नुकसान हो सकता है।

अध्ययन में कहा गया है कि बदलती दुनिया में सक्रिय कीट प्रबंधन विकसित करने, नियंत्रण प्रयासों की लागत को कम करने और प्राकृतिक दुश्मनों और पारिस्थितिकी तंत्र के अन्य पहलुओं पर प्रभाव को कम करते हुए खाद्य सुरक्षा को आश्वस्त करने के लिए निष्कर्षों का उपयोग किया जा सकता है। अध्ययनकर्ताओं ने कहा हमारे परिणाम क्षेत्रों में सर्दियों में कीटों के अस्तित्व में अंतर के अनुकूल होने के लिए कीट प्रबंधन रणनीतियों को शामिल करने के महत्व पर जोर देते हैं और इस बात पर भी जोर देता है कि भविष्य में जलवायु परिदृश्यों में किस तरह का बदलाव आएगा।

भारतीय वैज्ञानिक ने मधुमक्खी के छत्ते की तरह बनाया शोर नियंत्रक

मुंबई। भारतीय शोधकर्ता ने ध्वनि को अवशोषित करने वाले एक नए पैनल का निर्माण किया है। इसके लिए मधुमक्खी के छत्ते जिसे हनीकॉम्ब भी कहते है और मजबूत पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना का उपयोग किया गया है। यह ध्वनि ऊर्जा को उसकी कम आवृत्ति सीमा में बदल देता है। इस तकनीक का उपयोग पर्यावरणीय शोर नियंत्रण के समाधान के रूप में किया जा सकता है। कई पारंपरिक सामग्रियों के ध्वनि की उच्च आवृत्तियों को अच्छी तरह से नियंत्रित करने के बारे में पता चला है। हालांकि प्राकृतिक तौर पर मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामिति के कारण उच्च और निम्न ध्वनि आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने योग्य पाया गया है। सैद्धांतिक रूप से विश्लेषण करने और प्रायोगिक जांच से यह पाया गया है कि यह तकनीक ध्वनि ऊर्जा को कंपन ऊर्जा में बदल देती है। यह कंपन ऊर्जा दीवार में रोकने वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में नष्ट हो जाती है। एक इंजीनियरिंग समाधान के रूप में इस प्रक्रिया की नकल करना ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए एक सस्ता और प्रभावी तरीका हो सकता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) हैदराबाद में मैकेनिकल और एयरोस्पेस इंजीनियरिंग विभाग के डॉ. बी. वेंकटेश और डॉ. सूर्या ने बायोमिमेटिक डिजाइन पद्धति का उपयोग किया। उन्होंने इस प्रक्रिया की नकल करते हुए कम मोटा और मजबूत ध्वनिक पैनल तैयार किए। डिजाइन पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनि ऊर्जा को नष्ट करने की प्रक्रिया को समझना और फिर इसकी नकल करना शामिल है। टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की और फिर व्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के लिए नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलग-अलग प्रकार की सामग्रियों के साथ दो अलग-अलग तरीकों और उनके संबंधित प्रोटोटाइप मशीनों का उपयोग किया है। एक प्रोटोटाइप मधुमक्खी के छत्ते या पेपर हनीकॉम्ब के लिए अनुक्रमित प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर की हनीकॉम्ब संरचना है।

वायु प्रदूषण के कारण बढ़ रहा है बच्चों की मौत का आंकड़ा

मुंबई। एक नई रिपोर्ट में कहा गया है कि दुनिया भर में वायु प्रदूषण को कम करने के लिए तुरंत कदम उठाए जाने की जरूरत है। सेव द चिल्ड्रन इंटरनेशनल की अगुवाई में जारी की गई इस रिपोर्ट सिटीज 4 चिल्ड्रन में बच्चों और युवाओं पर वायु प्रदूषण के प्रभावों के बारे में बताया गया है। साथ ही इस मुद्दे के समाधान के लिए किए जा रहे कार्यों पर भी प्रकाश डाला गया है।

वायु प्रदूषण स्वास्थ्य के लिए एक प्रमुख चुनौती के रूप में उभर कर सामने आया है जिससे निम्न और मध्यम आय वाले देशों के बच्चों पर सबसे अधिक असर पड़ रहा है। हर दिन दुनिया के 19 साल से कम उम्र के 93 फीसदी बच्चे भारी प्रदूषित हवा में सांस लेते हैं जो उनके स्वास्थ्य और विकास को खतरे में डालता है। 2019 में वायु प्रदूषण के चलते शिशुओं के जन्म के महीने भर के अंदर लगभग 5 लाख मौतें हुईं। हर साल लगभग 2,37,000 से अधिक बच्चों की मौत परिवेशी वायु प्रदूषण के चलते सांस के रास्ते के संक्रमण के कारण होती है। बच्चे विशेष रूप से वायु प्रदूषण की वजह से स्वास्थ्य को होने वाले खतरों के प्रति संवेदनशील होते हैं क्योंकि उनका शरीर अभी भी बढ़ रहा होता है। वे वयस्कों की तुलना में शरीर के वजन की प्रति इकाई हवा की अधिक मात्रा में सांस लेते हैं, इसलिए अधिक प्रदूषक उनके शरीर के अंदर जा सकते हैं। बच्चे उस समय से असुरक्षित होते हैं जब वे मां के गर्भ में होते हैं। मां और भ्रूण द्वारा अनुभव किए गए तनाव बच्चे और उसके भविष्य के लिए खतरनाक हो सकते हैं। गर्भावस्था के दौरान वायु प्रदूषण का खतरा इसी तरह स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है, हालांकि उस प्रभाव की भयावहता का सही अंदाजा अभी तक नहीं है। अध्ययनों में गर्भाशय प्रदूषण के खतरे और भ्रूण के विकास, जन्म के समय और बचपन में फेफड़ों के कार्य के विकास के बीच संबंध पाया गया है। बायोमास ईंधन के घर के अंदर जलने से होने वाले घरेलू वायु प्रदूषण को निमोनिया सहित तीव्र श्वसन संक्रमण से जोड़ा गया है, जिसका अधिकांश असर अफ्रीका और एशिया में देखा गया है। रिपोर्ट के लेखकों में से एक डॉ. क्रेसिडा बॉयर ने एक अन्य रिपोर्ट का हवाला देते हुए कहा कि कम विकसित देशों के शहरों में वायु प्रदूषण के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में प्लास्टिक कचरे सहित अन्य कचरे को खुले में जलाना है। प्लास्टिक कचरे का उपयोग अक्सर खाना पकाने, गर्म करने और घरों में रोशनी के लिए उपयोग की जाने वाली खुली आग के रूप में किया जाता है। इसके परिणामस्वरूप बच्चों को, बाहर और घर के अंदर वायु प्रदूषण का बहुत अधिक खतरा होता है। रिपोर्ट सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों को समझने और वायु प्रदूषण को कम करने के लिए व्यावहारिक समाधानों हेतु स्थानीय समुदायों के साथ काम करने के महत्व पर प्रकाश डालती है। सहारा अफ्रीका में आकाशवाणी नेटवर्क और टुपुम्पू अनुसंधान परियोजनाओं के साथ अपने काम के माध्यम से, डॉ बॉयर ने जागरूकता बढ़ाने और क्षेत्र में वायु प्रदूषण और फेफड़ों की बीमारी के मुद्दों पर दृष्टिकोण और धारणाओं का पता लगाने के लिए दृश्य कला, संगीत और रंगमंच जैसे कला-आधारित तरीकों का विकास और उपयोग किया है। पोर्ट्समाउथ विश्वविद्यालय की टीम ने प्लास्टिक प्रदूषण को समाप्त करने के लिए सतत प्रयास (एसटीईपीपी) परियोजना में कला-आधारित विधियों का उपयोग जारी रखा है। यह प्लास्टिक कचरे के समाधान का पता लगाने और उसे शुरू करने के लिए केन्या और बांग्लादेश में समुदाय और पर्यावरण संगठनों के साथ सहयोग करती है। इनका काम चित्रों, संगीत वीडियो और अन्य माध्यम से लोगों को जागरूक करना है। इस तरह के कार्यक्रमों को कलाकारों और संगीतकारों के साथ मिलकर बनाया गया है। ताकि प्लास्टिक प्रदूषण को कम करने के लिए स्थानीय समुदाय को शिक्षित किया जा सके। डॉ. बॉयर कहते हैं बच्चों और युवाओं के साथ काम करते समय रचनात्मक तरीके विशेष रूप से उपयोगी हो सकते हैं। मुख्य बात यह है कि हस्तक्षेप सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त, कम खर्चीला और लोगों के लिए स्वीकार्य होना चाहिए। हितधारकों के साथ परामर्श करना, प्रभावित व्यक्तियों और समुदायों के साथ काम करना और समुदायों के भीतर वायु प्रदूषण जैसी समस्याओं को पहचानने, समझने और समाधान में मदद करने की क्षमता का निर्माण करना महत्वपूर्ण है। रिपोर्ट में निष्कर्ष निकाला गया है कि वायु प्रदूषण, उत्सर्जन और प्रदूषण के खतरों को कम करने के लिए स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्रवाई करने की आवश्यकता है। कई मामलों में ये कार्रवाइयां जलवायु परिवर्तन से निपटने सहित कई अन्य संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में योगदान दे सकते हैं। कार्रवाई के लिए एक समान दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें समुदाय के सदस्यों, योजनाकारों और नीति निर्माताओं के साथ सहयोग शामिल है।

साभार - डाउन टू अर्थ

दलहन के पारंपरिक किसानों का समर्थन करने से मिल सकती है दालों की आत्मनिर्भरता

लखनऊ। दालों की जमाखोरी हमेशा महंगाई लेकर आती है। दालों की महंगाई जमाखोरी का एक संकेतक बन गई है। शायद इसी भय से बीच-बीच में कानून में फेरबदल और बदलाव होते हैं। स्वतंत्र व कानून मामलों की शोधार्थी व नीति विशेषज्ञ शालिनी भुटानी का यह आलेख इन्हीं परेशानियों की तहें खोल रहा है भारत सरकार स्पष्ट रूप से जमाखोरी को लेकर चिंतित है, जो ऐसे समय में दालों की कीमतों को बढ़ा सकती है जब मुद्रास्फीति बढ़ रही है। पूर्व में भी एसेंशियल कमोडिटी एक्ट (ईसीए) के तहत निर्धारित अनाज और दालों की स्टॉकिंग सीमा ने जमाखोरी को रोकने में मदद की। यह 2 जुलाई 2021 को पारित आदेश (19 जुलाई को संशोधित आदेश) का स्पष्ट कारण प्रतीत होता है। इस आदेश के तहत स्टॉक सीमा की अवधि 31 अक्टूबर 2021 तक है।

स्टॉक सीमा का यह आदेश यह उस अवधि से भी मेल खाता है जिसमें मई 2021 से भारत सरकार द्वारा एक ओपन जेनरल लाइसेंस (ओजीएल) के तहत दालों के आयात की अनुमति दी गई है। इसका तात्पर्य यह है कि दालों को बिना लाइसेंस और बिना किसी प्रतिबंध के स्वतंत्र रूप से आयात किया जा सकता है। हालांकि, 2 जुलाई को दिया गया स्टॉक सीमा पर हालिया आदेश आयातकों द्वारा स्टॉक किये जा सकने वाले माल की मात्रा पर सीमा निर्धारित करता था। कानून और नीतियों में ये लगातार बदलाव अनिश्चितताएं पैदा करते हैं, खासकर आयातकों के लिए। हालाँकि भारत को दालें निर्यात करने वाले मलावी और म्यांमार जैसे देशों के साथ सरकार ने जून 2021 में एक समझौता किया जिसके तहत भारत सरकार इन दोनों देशों से अगले पांच वर्षों तक निजी व्यापार के माध्यम से अरहर और उड़द दाल आयात करेगी। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि ये देश घरेलू स्तर पर दाल का उपभोग नहीं करते हैं जैसा कि भारत करता है। लेकिन शायद सबसे अधिक आवश्यकता दालों के घरेलू उत्पादन में तेजी लाने की है। भारत दुनिया में दालों का सबसे बड़ा उपभोक्ता है। भले ही केवल 10 राज्य देश की 70 प्रतिशत दाल की खपत करते हैं। क्षेत्र विशिष्ट आवश्यकताएं होने के साथ साथ भारत में न तो समान खाने की आदतें है और न ही समान कृषि पारिस्थितिक वास्तविकताएं। यह विविधता स्वयं एक अधिक गैर-केंद्रीकृत उत्पादन योजना के आयोजन का माध्यम हो सकती है। 2033 के लिए मांग और आपूर्ति अनुमानों पर नीति आयोग की रिपोर्ट में सिफारिश की गई है कि आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए क्षेत्र में रबी दालों की क्षमता और उपज विस्तार का पूरी तरह से उपयोग करने की आवश्यकता है। दालें खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए भारत सरकार की रणनीति का अभिन्न अंग हैं। उपभोक्ता मामले विभाग, भारत सरकार का उपभोक्ता मंत्रालय एवं खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय को वितरण के लिए पर्याप्त बफर स्टॉक सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। उपभोक्ता मामलों के सचिव के अनुसार- पीएमजीकेएवाई के पहले चरण में, राज्यों की प्राथमिकताएं जो भी थीं (और वे अविश्वसनीय रूप से विविध थीं) उन सभी दालों की आपूर्ति उन राज्य सरकारों को की गयी थी। और जुलाई से नवंबर 2020 तक चले कार्यक्रम के अगले चरण में सभी राज्यों को काला चना दिया गया था। यह सुनिश्चित करना कि दालों की खरीद एमएसपी पर हो; और व्यापारिक मूल्य में किसी भी गिरावट के मामले में, नेफेड जैसी सरकारी एजेंसियों को न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) पर उपज खरीदना चाहिए। हालांकि, किसानों का तर्क है कि वे हमेशा निर्धारित एमएसपी प्राप्त करने में सक्षम नहीं होते हैं और देश में विभिन्न दाल उत्पादक राज्यों में उत्पादन की लागत अलग-अलग होती है, इसलिए एक समान मूल्य काम नहीं करता है। मार्च 2021 की सीएसीपी की अपनी रिपोर्ट में कहा गया है कि चावल की तुलना में इन फसलों में कम लाभप्रदता, उच्च जोखिम और प्रभावी खरीद प्रणाली की कमी के कारण, किसानों के पास इन फसलों को उगाने हेतु कोई प्रोत्साहन नहीं है। सीएसीपी की सिफारिश है कि राज्यों को सही समय पर बाजार में हस्तक्षेप करने के लिए सक्रिय कदम उठाने चाहिए और मूल्य समर्थन योजना (पीएसएस) के तहत पर्याप्त रसद सहायता प्रदान करके खरीद कार्यों को मजबूत करना चाहिए। हम जितना ध्यान दालों पर दे रहे हैं उतना ही ध्यान इन दालों को उगाने वाले किसानों पर दिये जाने की आवश्यकता है। एफएओ के अनुसार पारिवारिक किसान दुनिया भर में 90 प्रतिशत से अधिक दलहन उगाते हैं। स्थानीय फलियों और पारंपरिक फलियों का समर्थन किसानों की कृषि को फिर से मजबूत कर सकता है। यह राष्ट्र का पोषण करने के साथ साथ पृथ्वी के स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक है।

साभार - डाउन टू अर्थ

क्या 50 लाख साल बाद, जल संकट से होने वाले पलायन से फिर जूझ रही है दुनिया?

नई दिल्ली। दिल्ली के श्रम बाजारों में पिछले कुछ हफ्तों से भीड़ बढ़ने लगी है। अनौपचारिक कामगारों के ये बाजार आसपास के राज्यों, विशेष रूप से उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र के मौसम की स्थिति का पैमाना हैं। मानसून का यह मौसम अनिश्चितताओं से भरा है। दिल्ली के बाजारों में अनौपचारिक कामगारों की संख्या में वृद्धि भविष्य के सूखे का एक निश्चित संकेत है। कृषि के मौसम के मध्य इस पलायन को आमतौर पर पानी की कमी से जोड़कर देखा जा रहा है। श्रम बाजारों को ट्रैक करके और पलायन के लिए चर्चित राज्यों के प्रमुख रेलवे स्टेशनों पर श्रमिकों की बढ़ती भीड़ देखकर अंदाजा लगाया जा सकता है कि उनकी आजीविका कितने गहरे संकट में है।

हताशा भरे इस पलायन के मूल में हमेशा पानी की उपलब्धता रहती है। इस तरह के पलायन को देखकर पुराने घटनाक्रम जेहन में उभरने लगते हैं। करीब 50 लाख साल पहले पूर्वी अफ्रीका में पड़े सूखे ने हमारे पूर्वजों को जल समृद्ध स्थानों में पलायन के लिए बाध्य कर दिया था। कहा जाता है कि तभी से मनुष्य पानी के पीछे भाग रहा है। आवास और भोजन से अधिक पानी के लिए पलायन हुआ है। ओडिशा से दूरस्थ केरल में पलायन की प्रमुख वजह भी पानी था। इस पानी के संकट ने जीवनयापन को विभिन्न तरीकों से प्रभावित किया था। पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों का पतन कृषि विफलताओं का कारण बना, जिसके परिणामस्वरूप बुंदेलखंड क्षेत्र से पलायन हुआ। अगर हम इतिहास पर नजर डालें तो पाएंगे कि प्राचीन काल में बस्तियों उन्हीं स्थानों पर बसाई गईं जहां पानी उपलब्ध था। वर्तमान में इसकी कमी ने एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर पलायन बढ़ा दिया है। लोग जल की उपलब्धता और बेहतर आजीविका के लिए भी अपना पैतृक आवास छोड़ रहे हैं। प्राचीन काल में कृषि और शिकार आजीविका के प्रमुख साधन थे। समय के साथ हमने आजीविका के कई साधन बढ़ा लिए हैं। सवाल उठता है कि क्या दुनिया पानी की कमी के कारण एक और परिवर्तनकारी पलायन का गवाह बनेगी? गंभीर जल संकट का प्रमाण हम सबके समक्ष है। जलवायु परिवर्तन से यह संकट और बढ़ गया है। विभिन्न अनुमानों से पता चलता है कि धरती के 66 प्रतिशत भूमि क्षेत्रों में पानी की कमी हो रही है। भीषण सूखे का सामना कर रही जनसंख्या 21वीं सदी के अंत तक दोगुनी हो सकती है। हाल ही में विश्व बैंक की रिपोर्ट ÷वेब एंड फ्लो÷ वाटर, माइग्रेशन एंड डेवलपमेंट÷ 64 देशों से एकत्रित आंतरिक पलायन के आंकड़ों का विश्लेषण करती है। ये आंकड़े 1960 से 2015 के दौरान 189 जनगणनाओं से लिए गए हैं। रिपोर्ट में दलील दी गई है कि समकालीन दुनिया में आंतरिक पलायन की प्रमुख वजह पानी की कमी रही है। किसी बस्ती के लिए पूंजी मानी जाने वाली और सामाजिक विकास के लिए जरूरी विरासत में मिली जल संरचनाओं में कोई बदलाव नहीं हुआ है, जबकि हाल में मानव जनित परिवर्तनों के कारण हम पानी के प्रति और संवेदनशील हुए हैं, 50 लाख साल पहले से भी अधिक। आंकड़ों के इस व्यापक विश्लेषण से यह स्थापित होता है कि कम वर्षा के कारण 1970 और 2000 के बीच पलायन में 10-11 प्रतिशत वृद्धि हुई है। रिपोर्ट के अनुसार, ÷हैरानी की बात है कि बारिश अथवा बाढ़ (वेट शॉक) के मुकाबले सूखे (ड्राई शॉक) के कारण पलायन पर 5 गुणा असर पड़ता है। बार-बार सूखे के झटकों के कारण स्थानीय लोग खुद को अनुकूलित नहीं कर पाते।÷ पानी की कमी से उठने वाली पलायन की लहर विकासशील और गरीब देशों में अधिक प्रबल रही है। पलायन के विभिन्न कारण हैं, जैसे बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश, उच्च शिक्षा की चाह, संघर्ष और भीषण आपदाएं। बहुत से देशों में सूखा या पानी की कमी से होने वाले पलायन को शिक्षा के लिए होने वाले पलायन के बाद रखा गया है। जलवायु परिवर्तन ने इस संकट को और बढ़ा दिया है। पिछले तीन दशकों में दुनिया की औसतन 25 फीसदी आबादी को हर साल असामान्य बारिश का सामना करना पड़ा। इस तरह के झटकों का लोगों पर बड़ा आर्थिक प्रभाव पड़ता है। जलवायु परिवर्तन को देखते हुए अनुमान लगाया जा रहा है कि आने वाले समय में सूखा बढ़ेगा जिससे पलायन और तेजी से बढ़ सकता है। विश्व बैंक की रिपोर्ट में पाया गया है कि किसी क्षेत्र में सबसे गरीब कमा बारिश का दंश झेलने को अभिशप्त होंगे। रिपोर्ट में कहा गया है कि 80 प्रतिशत निर्धनतम आबादी पर्याप्त पानी नहीं होने के बावजूद पलायन नहीं कर पाएगी क्योंकि आर्थिक तंगी आड़े आएगी।

- साभार

एशियाई मानसून में अहम भूमिका निभाती है तिब्बती पठार पर जमीं ताजे पानी की झीलें

तिब्बत। तीसरा ध्रुव कहलाने वाला तिब्बत का पठार दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे ऊंचा पठार है। यह पृथ्वी की जलवायु और जल चक्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका एशियाई मानसून प्रणाली के बनने में और पीली, यांग्त्ज़ी, मेकांग, साल्विन, ब्रह्मपुत्र और सिंधु नदियों जैसी बड़ी एशियाई नदियों की उत्पत्ति में अहम भूमिका है। तिब्बती पठार पर जमी ताजे पानी की झीलें लेंस की तरह काम कर सूरज की गर्मी जमा करती हैं।

इस ऊंचे पहाड़ या अल्पाइन पर स्थित झील प्रणाली किंघई-तिब्बत पठार के ऊपर स्थित है जिसे आमतौर पर तिब्बती पठार के रूप में जाना जाता है। शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि झीलें जमीन और वायुमंडल के बीच गर्मी के बदलाव को प्रभावित करती हैं, जिससे क्षेत्रीय तापमान और वर्षा प्रभावित होती है। लेकिन तिब्बती झीलों के प्राकृतिक गुणों और गर्मी संबंधी (थर्मल) गतिशीलता के बारे में बहुत कम जानकारी है, खासकर सर्दियों के महीनों के दौरान जब झीलें बर्फ से ढंकी होती हैं। उस समय पर तापमान 6 डिग्री सेल्सियस से अधिक हो जाता है। गर्मी पानी से बर्फ के आवरण को पिघलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक नए अध्ययन में, किरिलिन और सहयोगियों ने पठार पर सबसे बड़ी मीठे या पानी की झील (610 वर्ग किलोमीटर) चीन की नोरिंग झील को देखा, जो आमतौर पर दिसंबर से अप्रैल के मध्य तक बर्फ में ढंकी रहती है। टीम ने सितंबर 2015 में झील के सबसे गहरे हिस्सों में से एक में तापमान, दबाव और विकिरण लॉगर्स के बारे में पता लगाया। उन्होंने झील की सतह के जमने के बाद एक नियम विरुद्ध गर्मी की प्रवृत्ति देखी, क्योंकि सतह पर सौर विकिरण ने बर्फ के नीचे ऊपर के पानी की परतों को गर्म कर दिया था। पूरे बर्फ के आवरण के एक महीने के भीतर मजबूत संवहन मिश्रण ने नोरिंग झील को पूरी तरह से अपनी औसत गहराई तक मिश्रित कर दिया। यह अध्ययन जियोफिजिकल रिसर्च लेटर्स में प्रकाशित हुआ है। अधिकांश बर्फ से ढकी झीलों में, पानी का तापमान आमतौर पर अधिकतम घनत्व तापमान से नीचे रहता है, लेकिन यहां शोधकर्ताओं ने पाया कि बर्फ के मौसम के मध्य तक पानी का तापमान अधिकतममीठे पानी के घनत्व से अधिक था। जिसने जाड़े का मौसम के अंत में बर्फ के पिघलने को तेज कर दिया। जैसे ही बर्फ टूटती है, पानी का तापमान लगभग 1 डिग्री सेल्सियस गिर जाता है, केवल एक या दो दिनों में वातावरण में लगभग 500 वाट प्रति वर्ग मीटर गर्मी छोड़ देता है। अध्ययन से पता चलता है कि झीलें बर्फ के नीचे निष्क्रिय नहीं रहती हैं। लेकिन प्रभाव स्थानीय झील प्रभावों से बाहर हैं। एक साथ लिया जाए, तो पठार के पार हजारों झीलें बर्फ के पिघलने के बाद हीट फ्लक्स हॉट स्पॉट हो सकती हैं, सौर विकिरण से अवशोषित कर गर्मी निकल सकती हैं और तापमान, संवहन और जल द्रव्यमान प्रवाह में परिवर्तन को वैश्विक स्तर पर संभावित प्रभावों के साथ चला सकती हैं।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर
(म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008